१६

टोबा टेकसिंह

सादत हसन मंटो

बँटवारे के दो-तीन साल बाद, पाकिस्तान और हिन्दुस्तान की सरकारों को यह ख़्याल आया कि नैतिक अपराधियों की तरह पागलों का तबादला भी होना चाहिए। याने जो मुसलमान पागल हिन्दुस्तान के पागलख़ानों में हैं उन्हें पाकिस्तान पहुँचा दिया जाए और जो हिन्दू और सिक्ख पागल पाकिस्तान के पागलख़ानों में मौजूद हैं, उनको हिन्दुस्तान के हवाले कर दिया जाए।

मालूम नहीं, यह बात सही थी या ग़लत, लेकिन विद्वानों के फ़ैसले के मुताबिक़, इधर-उधर, ऊँचे स्तर पर कॉन्फ़रेन्सें हुईं, और आख़िर में एक दिन पागलों के तबादले के लिए तय हो गया। अच्छी तरह छान-बीन की गयी। वे मुसलमान पागल, जिनके रिश्तेदार हिन्दुस्तान ही में थे, वहीं रहने दिये गये, जो बाक़ी बचे उनको सीमा पर भेज दिया गया। यहाँ पाकिस्तान में, चूँकि क़रीब-क़रीब सभी हिन्दू-सिक्ख जा चुके थे, इसलिए किसी को रखने-रखाने का सवाल ही पैदा न हुआ। जितने हिन्दू-सिक्ख पागल थे, सब के सब, पुलिस की हिफ़ाज़त में, सरहद पर पहुँचा दिये गये।

उधर का मालूम नहीं। लेकिन इधर, लाहौर के पागलख़ाने में, जब इस तबादले की ख़बर पहुँची तो बड़ी दिलचस्प बातें होने लगीं। एक मुसलमान पागल से, जो बारह बरस से बाक़ायदा हर रोज़, "ज़मींदार" पढ़ता था, जब उसके एक मित्र ने पूछा, "मौलवी साहब, यह पाकिस्तान क्या होता है ?" तो उसने बड़े सोच-विचार के बाद जवाब दिया — "हिन्दुस्तान में एक ऐसी जगह है, जहाँ उस्तरे बनाते हैं।"

यह जवाब सुनकर उसका दोस्त सन्तुष्ट हो गया।

इसी तरह एक सिक्ख पागल ने दूसरे सिक्ख पागल से पूछा, "सरदार जी, हमें हिन्दुस्तान क्यों भेजा जा रहा है ? हमें तो वहाँ की बोली नहीं आती।"

दूसरा मुस्कुराया, "मुझे तो हिन्दुस्तान की बोली आती है। हिन्दुस्तानी बड़े शैतान, आकड़-आकड़ फिरते हैं।"

एक दिन नहाते-नहाते, एक मुसलमान पागल ने "पाकिस्तान ज़िन्दाबाद" का नारा इतने ज़ोर से लगाया कि फ़र्श पर फिसल कर गिरा और बेहोश हो गया।

कई पागल ऐसे भी थे, जो पागल नहीं थे। उनमें ज़्यादा तादाद ऐसे क़ातिलों की थी, जिनके रिश्तेदारों ने कुछ दे-दिला कर उन्हें पागलख़ाने भिजवा दिया था कि फाँसी के फन्दे से बच जाएँ। ये कुछ-कुछ समझते थे कि हिन्दुस्तान का बँटवारा क्यों हुआ है और पाकिस्तान क्या है। लेकिन सही घटनाओं से वे भी अनजान थे। अख़बारों से कुछ पता नहीं चलता था और पहरेदार सिपाही अनपढ़ और मूर्ख थे; उनकी बातचीत से भी कोई नतीजा नहीं निकलता था। उनको सिर्फ़ इतना मालूम था कि एक आदमी मुहम्मद अली जिन्ना है, जिसको "क़ायदे आज़म" कहते हैं। उसने मुसलमानों के लिए एक अलग देश बनाया है जिसका नाम पाकिस्तान है। यह कहाँ है, कहाँ-से-कहाँ तक फैला हुआ है — इसके बारे में वे कुछ नहीं जानते थे। यही वजह है कि पागलख़ाने में वे सब पागल, जिनका दिमाग़ पूरी तरह ख़राब नहीं था, इस असमंजस में थे कि वे हिन्दुस्तान में हैं अथवा पाकिस्तान में। अगर हिन्दुस्तान में हैं, तो पाकिस्तान कहाँ है और अगर वे पाकिस्तान में हैं, तो यह कैसे हो सकता है कि कुछ अरसा पहले, वे यहीं रहते हुए भी, हिन्दुस्तान में थे।

एक पागल तो पाकिस्तान और हिन्दुस्तान, हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के चक्कर में कुछ ऐसा गिरफ़्तार हुआ कि और ज़्यादा पागल हो गया। झाड़ू देते-देते एक दिन वह पेड़ पर चढ़ गया और टहनी पर बैठ कर दो घंटे लगातार भाषण देता रहा, जो पाकिस्तान और हिन्दुस्तान की गम्भीर समस्या पर था। सिपाहियों ने उसे नीचे उतरने को कहा तो वह और ऊपर चढ़ गया। डराया-धमकाया गया तो उसने कहा, "मैं न हिन्दुस्तान में रहना चाहता हूँ, न पाकिस्तान में। मैं इस पेड़ पर ही रहूँगा।"

बड़ी मुश्किलों के बाद, जब उसका दौरा सर्द पड़ा तो वह नीचे उतरा और अपने हिन्दू-सिक्ख दोस्तों से गले मिल-मिल कर रोने लगा। इस ख़्याल से उसका दिल भर आया था कि वे उसे छोड़ कर हिन्दुस्तान चले जाएँगे।

एक एम॰एस॰सी॰ पास रेडियो इंजीनियर में, (जो मुसलमान था और दूसरे पागलों से बिलकुल अलग-थलग, बाग़ की एक ख़ास रविश पर सारा दिन ख़ामोश टहला करता था) यह तब्दीली ज़ाहिर हुई कि उसने तमाम कपड़े उतार कर दफ़ेदार के हवाले कर दिये और नंग-धड़ंग सारे बाग़ में चलना-फिरना शुरू कर दिया।

चिन्नोट के एक मोटे-से मुसलमान पागल ने — जो मुस्लिम लीग का जोशीला सदस्य रह चुका था और दिन में पन्द्रह-सोलह बार नहाया करता था — सहसा यह आदत छोड़ दी। उसका नाम मुहम्मद अली था। इसलिए उसने एक दिन अपने जँगले में ऐलान कर दिया कि वह क़ायदे-आज़म मुहम्मद अली जिन्ना है। उसकी देखा-देखी एक सिक्ख पागल, मास्टर तारा सिंह बन गया। क़रीब था कि उस जंगले में ख़ून-ख़राबा हो जाए, मगर दोनों को ख़तरनाक पागल क़रार दे कर, अलग-अलग बंद कर दिया गया।

लाहौर का एक नौजवान हिन्दू वकील था, जो प्रेम में असफल हो कर पागल हो गया था। जब उसने सुना कि अमृतसर हिन्दुस्तान में चला गया है तो उसे बहुत दुख हुआ। उसी शहर में एक हिन्दू लड़की से उसे प्रेम हुआ था। हालाँकि उस लड़की ने उसे ठुकरा दिया था, लेकिन पागलपन की हालत में भी वह उसको नहीं भूला था। चुनाँचे वह उन तमाम हिन्दू-मुसलमान नेताओं को गालियाँ देता था, जिन्होंने मिल-मिला कर हिन्दुस्तान के दो टुकड़े कर दिये। उसकी प्रेमिका हिन्दुस्तानी बन गयी और वह पाकिस्तानी।

जब तबादले की बात शुरू हुई तो वकील को कई पागलों ने समझाया कि वह दिल बुरा न करे, उसको हिन्दुस्तान भेज दिया जाएगा; उस हिन्दुस्तान में, जहाँ उसकी प्रेमिका रहती है। मगर वह लाहौर छोड़ना नहीं चाहता था, इसलिए कि उसका ख़्याल था कि अमृतसर में उसकी प्रैक्टिस नहीं चलेगी।

यूरोपियन वॉर्ड में दो एंग्लो इंडियन पागल थे। उनको जब मालूम हुआ कि हिन्दुस्तान को आज़ाद करके अँग्रेज़ चले गये हैं तो उन्हें बड़ा दुख हुआ। वे छिप-छिपकर घंटों इस महत्त्वपूर्ण समस्या पर विचार करते कि पागलख़ाने में अब उनकी हैसियत क्या होगी। यूरोपियन वार्ड रहेगा या उड़ा दिया जायगा ? ब्रेकफ़ास्ट मिला करेगा अथवा नहीं ? उन्हें डबल रोटी के बजाय ब्लडी इंडियन चपाती तो नहीं खानी पड़ेगी ?

एक सिक्ख था, जिसे पागलख़ाने में आये पन्द्रह बरस हो चुके थे। उसके मुँह से हर वक़्त ये अजीबो-ग़रीब शब्द सुनने में आते थे, "ओ पड़ दी, गुड़गुड़ दी, अनेकस दी, बेध्याना दी, मूँग दी दाल ऑफ़ दी लालटेन !" दिन को सोता था न रात को। पहरेदारों का यह कहना था कि पन्द्रह बरस के लम्बे अरसे में, वह पल-भर के लिए भी नहीं सोया था, लेटता भी नहीं था; अलबत्ता कभी-कभी किसी दीवार के साथ टेक लगा लेता था।

हर वक़्त खड़े रहने से उसके पाँव सूज गये थे। पिंडलियाँ भी फूल गयी थीं, मगर इस शारीरिक कष्ट के बावजूद, वह लेट कर आराम नहीं करता था। हिन्दुस्तान, पाकिस्तान और पागलों के तबादले के बारे में, जब कभी पागलख़ाने में बातचीत होती तो वह ध्यान से सुनता। कोई उससे पूछता कि उसका क्या ख़्याल है तो वह बड़ी गम्भीरता से जवाब देता, "ओ पड़ दी, गुड़गुड़ दी, अनेकस दी, बेध्याना दी, मूँग दी दाल ऑफ़ दी पाकिस्तान गौरमेंट।"

लेकिन बाद में "ऑफ़ दी पाकिस्तान गौरमेंट" की जगह "ऑफ़ दी टोबा टेकसिंह गौरमेंट" ने ले ली और उसने दूसरे पागलों से पूछना शुरू किया कि टोबा टेकसिंह कहाँ है, जहाँ का वह रहने वाला है। लेकिन किसी को भी मालूम नहीं था कि वह पाकिस्तान में है या हिन्दुस्तान में। जो बताने की कोशिश करते थे, वे इस चक्कर में उलझकर रह जाते थे कि सियालकोट पहले हिन्दुस्तान में था, पर अब सुना है कि पाकिस्तान में है। क्या मालूम है कि लाहौर, जो आज पाकिस्तान में है, कल हिन्दुस्तान में चला जाए या सारा हिन्दुस्तान ही पाकिस्तान बन जाए। और यह भी कौन सीने पर हाथ रख कर कह सकता था कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान — दोनों किसी दिन सिरे से ग़ायब ही न हो जाएँ।

उस सिक्ख के केश छिदरे होकर बहुत थोड़े रह गये थे। चूँकि बहुत कम नहाता था, इसलिए दाढ़ी और सिर के बाल आपस में जम गये थे, जिसकी वजह से उसकी शक्ल बड़ी भयानक हो गयी थी। मगर आदमी निरीह था। पन्द्रह बरसों में उसने किसी से झगड़ा-फ़साद नहीं किया था। पागलख़ाने के जो पुराने-पुराने मुलाज़िम थे, वे उसके बारे में इतना जानते थे कि टोबा टेकसिंह में उसके कई खेत थे; अच्छा खाता-पीता ज़मींदार था कि अचानक दिमाग़ उलट गया। उसके रिश्तेदार उसे लोहे की मोटी-मोटी जंज़ीरों में बाँध कर लाये और पागलख़ाने में भरती करा गये।

महीने में एक बार ये लोग मुलाक़ात के लिए आते थे और उसकी ख़ैर-ख़बर पूछ कर चले जाते थे। एक अरसे तक यह सिलसिला जारी रहा। पर जब पाकिस्तान-हिन्दुस्तान की गड़बड़ शुरू हुई तो उनका आना बन्द हो गया।

उसका नाम बिशन सिंह था, मगर सब उसे टोबा टेकसिंह कहते थे। उसको यह कतई मालूम नहीं था कि दिन कौन-सा है, महीना कौन-सा है या कितने साल बीत चुके हैं। लेकिन हर महीने, जब उसके सगे-सम्बन्धी उससे मिलने के लिए आते थे तो उसे अपने आप

पता चल जाता था। चुनाँचे वह दफ़ेदार से कहता कि उसकी मुलाक़ात आ रही है। उस दिन वह अच्छी तरह नहाता, शरीर पर ख़ूब साबुन मलता और सिर में तेल डाल कर कंघी करता। अपने कपड़े, जो कभी इस्तेमाल नहीं करता था, निकलवा के पहनता और यूँ बन-सँवर कर मिलने वालों के पास जाता। वे उससे कुछ पूछते, तो चुप रहता या कभी-कभार — "ओ पड़ दी, गुड़गुड़ दी, अनेकस दी, बेध्याना दी, मूँग दी दाल ऑफ़ दी लालटेन" कह देता।

उसकी एक लड़की थी, जो हर महीने एक उँगली बढ़ती-बढ़ती, पन्द्रह बरसों में जवान हो गयी थी। बिशन सिंह उसको पहचानता ही न था। वह बच्ची थी तो अपने बाप को देखकर रोती थी। जवान हुई तब भी उसकी आँखों से आँसू बहते थे।

पाकिस्तान और हिन्दुस्तान का क़िस्सा शुरू हुआ तो उसने दूसरे पागलों से पूछना शुरू किया कि टोबा टेकसिंह कहाँ है? जब सन्तोषजनक उत्तर न मिला तो उसकी कुरेद दिन-दिन बढ़ती गयी। अब मुलाक़ात भी नहीं आती थी। पहले तो उसे अपने आप पता चल जाता था कि मिलने वाले आ रहे हैं, पर अब जैसे उसके दिल की आवाज़ भी बन्द हो गयी थी, जो उसे उनके आने की सूचना दे दिया करती थी।

उसकी बड़ी इच्छा थी कि वे लोग आएँ, जो उससे सहानुभूति प्रकट करते थे और उसके लिए फल, मिठाइयाँ और कपड़े लाते थे। वह अगर उनसे पूछता कि टोबा टेकसिंह कहाँ है, तो यक़ीनन उसे बता देते कि पाकिस्तान में है या हिन्दुस्तान में, क्योंकि उसका ख़्याल था कि वे टोबा टेकसिंह ही से आते हैं, जहाँ उसकी ज़मीनें हैं।

पागलख़ाने में एक पागल ऐसा भी था, जो ख़ुद को ख़ुदा कहता था। उससे जब एक दिन बिशन सिंह ने पूछा कि टोबा टेकसिंह पाकिस्तान में है या हिन्दुस्तान में तो उसने अपना स्वाभाविक ठहाका लगाया और कहा, "वह न पाकिस्तान में है, न हिन्दुस्तान में, इसलिए कि हमने हुक्म नहीं दिया!"

बिशन सिंह ने उस ख़ुदा से कई बार बड़ी मिन्नत-समाजत से कहा कि वह हुक्म दे दे, ताकि झंझट ख़त्म हो, लेकिन वह अत्यधिक व्यस्त था, इसलिए कि उसे और बेशुमार हुक्म देने थे। एक दिन तंग आकर वह उसपर बरस पड़ा, "ओ पड़ दी, गुड़गुड़ दी, अनेकस दी, बेध्याना दी, मूँग दी दाल ऑफ़ वाहे गुरु दा ख़ालसा ऐंड वाहे गुरु दी फ़तह। जो बोले सो निहाल, सत्त श्री अकाल!"

इसका शायद यह मतलब था कि तुम मुसलमानों के ख़ुदा हो, सिक्खों के ख़ुदा होते तो ज़रूर मेरी सुनते।

तबादले से कुछ दिन पहले, टोबा टेकसिंह का एक मुसलमान, जो बिशन सिंह का दोस्त था, मुलाक़ात के लिए आया। पहले वह कभी नहीं आया था। जब बिशन सिंह ने उसे देखा तो एक तरफ़ हट गया और वापस जाने लगा, मगर सिपाहियों ने उसे रोका, "यह तुमसे मिलने आया है, तुम्हारा दोस्त फ़ज़लदीन है।"

बिशन सिंह ने फ़ज़लदीन की ओर देखा और कुछ बड़बड़ाने लगा। फ़ज़लदीन ने आगे बढ़कर, उसके कन्धे पर हाथ रखा, "मैं बहुत दिनों से सोच रहा था कि तुमसे मिलूँ, लेकिन फ़ुरसत ही न मिली। तुम्हारे सब आदमी ख़ैरियत से हिन्दुस्तान चले गये हैं। मुझसे जितनी मदद हो सकी, मैंने की। तुम्हारी बेटी रूप कौर...."

वह कुछ कहते-कहते रुक गया। बिशन सिंह कुछ याद करने लगा, "बेटी रूप कौर।"

फ़ज़लदीन ने रुक-रुक कर कहा, "हाँ.... वह..... वह भी ठीक-ठाक है। उनके साथ ही चली गयी थी।"

बिशन सिंह चुपचाप खड़ा रहा। फ़ज़लदीन ने कहना शुरू किया, "उन्होंने मुझसे कहा था कि तुम्हारी ख़ैर-ख़ैरियत पूछता रहूँ। अब मैंने सुना है कि तुम हिन्दुस्तान जा रहे हो। भाई बलबीर सिंह और भाई बधावा सिंह से मेरा सलाम कहना और बहन अमृत कौर से भी।.... भाई बलबीर से कहना कि फ़ज़लदीन राज़ी-ख़ुशी है। दो भूरी भैंसें, जो वे छोड़ गये थे, उनमें से एक ने पाड़ा दिया है; दूसरी के पाड़ी हुई थी, पर वह छै दिन की होके मर गयी।.... और मेरे लायक़ जो ख़िदमत हो, कहना। मैं हर वक़्त तैयार हूँ। और तुम्हारे लिए ये थोड़े-से मरूँडे लाया हूँ।"

बिशन सिंह ने मरूँडों की पोटली लेकर, पास खड़े सिपाही के हवाले कर दी और फ़ज़लदीन से पूछा, "टोबा टेकसिंह कहाँ है ?"

फ़ज़लदीन ने ज़रा हैरत से कहा, "कहाँ है ? वहीं है, जहाँ था।"

बिशन सिंह ने फिर पूछा, "पाकिस्तान में या हिन्दुस्तान में ?"

"हिन्दुस्तान में..... नहीं, नहीं.... पाकिस्तान में !"....... फ़ज़लदीन बौखला-सा गया।

बिशन सिंह बड़बड़ाता हुआ चला गया, "ओ पड़ दी, गुड़गुड़ दी, अनेकस दी, बेध्याना दी, मूँग दी दाल ऑफ़ दी पाकिस्तान ऐंड हिन्दुस्तान ऑफ़ दी दुर-फिट्टे मुँह !"

तबादले की तैयारियाँ पूरी हो चुकी थीं। इधर-से-उधर और उधर-से-इधर आने वाले पागलों की सूचियाँ पहुँच गयी थीं और तबादले का दिन भी तय हो चुका था।

सख़्त सर्दी पड़ रही थी, जब लाहौर के पागलख़ाने से हिन्दू-सिक्ख पागलों से भरी लारियाँ, पुलिस के रक्षक दस्तों के साथ, रवाना हुईं। सम्बन्धित अफ़सर भी साथ थे। वागा की सरहद पर दोनों ओर के सुपरिटेंडेंट एक-दूसरे से मिले और आरम्भिक कार्रवाई ख़त्म होने के बाद तबादला शुरू हो गया, जो रात-भर जारी रहा।

पागलों को लारियों से निकालना और उनको दूसरे अफ़सरों के हवाले करना बड़ा मुश्किल काम था। कई तो लारियों से निकलते ही न थे; जो निकलना मंज़ूर कर लेते थे, उनको संभालना मुश्किल हो जाता था, क्योंकि वे इधर-उधर भाग खड़े होते थे। जो नंगे थे, उनको कपड़े पहनाये जाते तो वे उन्हें फाड़कर अपने तन से अलग कर देते। कोई गालियाँ बक रहा है, कोई गा रहा है, आपस में लड़-झगड़ रहे हैं, रो रहे हैं, बिलख रहे हैं। कान पड़ी आवाज़ सुनायी नहीं देती थी। पागल औरतों का शोर-गुल अलग था और सर्दी इतनी कड़ाके की थी कि दाँत-से-दाँत बज रहे थे।

पागलों का बहुमत इस तबादले के हक़ में नहीं था। इसलिए कि उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि उन्हें अपनी जगह से उखाड़कर कहाँ फेंका जा रहा है। वे कुछेक, जो सोच-समझ सकते थे, "पाकिस्तान ज़िन्दाबाद" और "पाकिस्तान मुर्दाबाद" के नारे लगा रहे थे। दो-तीन बार फ़साद होते-होते बचा, क्योंकि कुछ मुसलमानों और सिक्खों को ये नारे सुन कर तैश आ गया था।

जब बिशन सिंह की बारी आयी और वागा के उस पार सम्बन्धित अफ़सर उसका नाम रजिस्टर में दर्ज करने लगा तो उसने पूछा, "टोबा टेकसिंह कहाँ है ? पाकिस्तान में या हिन्दुस्तान में ?"

अफ़सर हँसा, "पाकिस्तान में।"

यह सुनकर बिशन सिंह उछलकर एक ओर हटा और दौड़कर अपने बाक़ी साथियों के पास पहुँच गया। पाकिस्तानी सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया और दूसरी ओर ले जाने लगे। मगर उसने चलने से इनकार कर दिया।

"टोबा टेकसिंह कहाँ है ?" और ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगा, "ओ पड़ दी, गुड़गुड़ दी, बेध्याना दी, मूँग दी दाल ऑफ़ टोबा टेकसिंह ऐंड पाकिस्तान !"

उसे बहुत समझाया गया कि देखो, अब टोबा टेकसिंह हिन्दुस्तान में चला गया है। अगर नहीं गया, तो उसे तुरन्त वहाँ भेज दिया जाएगा, मगर वह न माना। जब उसको बरबस दूसरी ओर ले जाने की कोशिश की गयी तो वह बीच में एक जगह इस तरह अपनी सूजी हुई टाँगों पर खड़ा हो गया, जैसे अब कोई शक्ति उसे वहाँ से नहीं हिला सकेगी।

आदमी चूँकि निरीह था, इसलिए उससे ज़्यादा ज़बरदस्ती न की गयी। उसको वहीं खड़ा रहने दिया गया और तबादले का बाक़ी काम होता रहा।

सूरज निकलने से पहले, निश्चेष्ट और अचल खड़े बिशन सिंह के कंठ से एक गगन-भेदी चीख़ निकली। इधर-उधर से कई अफ़सर दौड़े आये और देखा कि वह आदमी, जो पन्द्रह बरस तक दिन-रात अपनी टाँगों पर खड़ा रहा था, औंधे मुँह लेटा है।

उधर काँटेदार तारों के पीछे हिन्दुस्तान था, इधर ऐसे ही तारों के पीछे पाकिस्तान ! बीच में, ज़मीन के उस टुकड़े पर, जिसका कोई नाम नहीं था, टोबा टेकसिंह पड़ा था।